# क्या तुम भविष्य की आवाज सुन रहे हो?

## अपनी ओर से

नयी सदी का पहला वर्ष दुनिया के पैमाने पर भारी उथल-पुथल भरा रहा है। देश के पैमाने पर अर्थव्यवस्था को "उदारीकरण"-निजीकरण की नीतियों के जरिये जिस तबाही की ओर धकेला जा रहा है वह तीव्र गति से साकार हो रही है। पिछले वर्ष जितनी राजनीतिक सरगर्मियां दिखाई दीं उनमें पूजीवादी शक्तियों की खीचतान- हो हल्लों की ही प्रधानता रही। मेहनतकशों के कुछ छिटपुट आन्दोलन जरूर हुए,. लेकिन फिलहाली तौर पर कुल मिलाकर एक पस्ती का आलम ही दिखाई दिया। मेहनतकशों के खेमें से जो सरगर्मियां हुई थीं, उनमें भी पूंजीवादी-अवसरवादी ट्रेड यूनियनों की रस्मी-कर्मकाण्डी कार्रवाइयाँ ही मुख्य रुप से उभरकर सामने आयीं । इन रस्मी कार्रवाईयों ने जनता की पस्ती को बढाने का ही काम किया। अगर हम राष्ट्रीय परिदृश्य पर बारीकी से नजर डाले तो देश के पूँजीवादी व्यवस्था के संकट के कई लक्षण मुखरता से प्रकट हुए, पर प्रतिरोध के स्वर कमजोर ही रहे।

देश के तमाम कैम्पसों में पिछले कुछ वर्षों से जो एक सन्नाटा पसरा हुआ है उसके टूटने के कोई संकेत भी नजर नहीं आये। पूँजीवादी छात्र संगठनों या व्यक्तिवादी-कैरियरवादी बुर्जुआ छात्र नेताओं की ओर तो आम छात्रों ने उम्मीद के साथ देखना कभी का बन्द कर दिया था, नामधारी वामपन्थी छात्र संगठन भी आम छात्रों की नजर से उतर चुके हैं। पिछले कुछ वर्ष उनके तीव्र पराभव के रहे हैं। कहीं-कहीं तो वे शीतनिद्रा में चले गये प्रतीत होते हैं।

चाहे शिक्षा के साम्प्रदायिकीकरण का मुद्दा हो या बिड़ला-अम्बानी रिपोर्ट के जरिये थोपी जा रही घोर पूंजीपरस्त नीतियों के विरोध का सवाल हो, एस.एफ.आई. ए. आई. एस. एफ. और आइसा जैसे नाम धारी वामपन्थी छात्र संगठन इन सवालों पर कोई कारगर विरोध संगठित करने की स्थिति में हैं ही नहीं। ये अब कुछ रस्म अदायगी कर किसी तरह कुछ महानगरीय केन्द्रों में अपना अस्तित्व बचाये रखने के लिए ही विशेष रूप से सचेष्ट रहे हैं। जे. एन. यू. जैसे सामाजिक जनवाद के कुछ बचे-खुचे केन्द्रों में छात्र संघ चुनाव में अगर वे जीत दर्ज कर लें रहे हैं तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। ऐसी जगहों पर भी अब रैडिकल वाम छात्र राजनीति की बची-खुची उपस्थिति का भी तीव्र लोप हो रहा है और एस. एफ. आई. - आइसा मार्का वामपन्थी संगठन ज्यादा से ज्यादा बुर्जुआ सुधारवादी चरित्र ग्रहण करते जा रहे हैं।

इसके साथ ही, जो क्रान्तिकारी वाम छात्र राजनीति की धारा से जुड़े छात्र संगठन कैम्पसों में मौजूद रहें हैं। उनका ठहराव विघटन भी गंम्भीर हुआ है। इनमें से कुछ अभी भी क्रांतिकारी वामपंथी छात्र राजनीति की जुगली करते हुए तेजी के साथ विपथगामी होने की ओर अग्रसर हैं। बेहतर होता कि इन्हें जहां जाना है वहां जल्दी से जल्दी पहुंच जाते। तब नये विकल्पों के लिए ज्यादा अनुकूल हालात पैदा हो सकते थे। इसके साथ ही, कुछ छात्र संगठन ऐसे हैं जिनमें ईमानदार- निष्ठावान कार्यकर्त्ता मौजूद हैं लेकिन ठोस परिस्थितियों की गलत समझ के कारण वर्तमान कठिन समय में छात्रों-युवाओं की कसौटी पर खरे नहीं उतर पाये हैं। साफ-साफ कहा जा सकता है कि इनके पास कोई वैकल्पिक कार्यक्रम मौजूद नहीं जो आम छात्रों को आकृष्ट कर सके।

क्रांतिकारी छात्र राजनीति की धारा से जुड़े छात्र संगठनों में कुट तो घनघोर कठमुल्ले हैं जो वैचारिक संकीर्णता के शिकार हैं। क्रांतिकारी जनदिशा लागू करने में यानी आम छात्र-युवा आबादी को व्यापक रूप में जागरुक,गोलबंद और संगठित करने में तो ये पहले ही विफल सिद्ध हो चुके हैं। अब उनकी विफलता कठिन हालात के मद्देनजर साफ-साफ दिखायी दे रही है। समाज और राजसत्ता का विश्लेषण करने के नाम पर ये चाहे जितनी गर्म बाते करें, उनके चिंतन में वर्गीय पहुंच का अभाव साफ-साफ दिखायी देता है। जब ये छात्र-युवा आन्दोलन की बात करते हैं तो छात्र-युवा आबादी की वर्गीय संरचना की अनदेखी कर देते हैं। वे या तो गैरवर्गीय भाषा में छात्र-युवाओं के भीतर देशभक्ति के जज्बों को उभाड़ने की कोशिश करते हैं या फिर घिसे-पिटे यांत्रिक ढंग से सामन्तवाद-साम्राज्यवादी संघर्षों की शिरकत करने का आह्वान करते हैं। आज के समय में छात्र-युवा आबादी के वर्ग हितों की आवाज उठाकर मेहनतकशों के बेटे-बेटियों को ललकारने की जरूरत है। लेकिन ऐसा करने में असफल होते हुए ये छात्र संगठन अधिक से अधिक जुझारू(रैडिकल) सुधारवादी कार्रवाइयों से आगे नहीं बढ़ पाते।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे वाम नामधारी छात्र संगठन भी हैं जो कुछेक महानगरों में केन्द्रित रहते हुए कुछ वैचारिक-सांस्कृतिक अनुष्ठान करते हुए समय-समय पर अपने जिंदा रहने का सबूत देते रहते हैं। अतीत की निरन्तरता के आधार पर समय-समय पर किसी प्रगतिशील-वामपंथी बुद्धिजीवी का व्याख्यान कराते हुए या कुछेक कॉलेजों में छात्रसंघ चुनावों में कुछ प्रत्याशी खड़ा कर, शिक्षा के निजीकरण, साम्प्रदायिकीकरण आदि के खिलाफ कुछ रस्मी राजनीतिक कवायद करते हुए वैकल्पिक छात्र राजनीति का केन्द्र होने का दम भरते रहते हैं। इससे इतर ये छात्र हितों के लिए संघर्षकरनेके नाम पर मध्यवर्गीय-आत्मकेन्द्रित-स्वार्थी-व्यक्तिवादी-कैरियरवादी युवा मानस का तुष्टीकरण कर रहें हैं। इनके कलेजे में यह दम ही नहीं कि वे आम छात्रों का सीधे-सीधे आह्वान करें कि वे आज रोजगार की अपनी मांग को छंटनी के शिकार, तबाह-बरबाद हो रहे, दर-बदर किये मेहनतकशों के संघर्षों के साथ जोड़ें। अपनी मध्यवर्गीय

सोच, हिचक-संकोच से मुक्त हो अपने सपनों को मेहनतकशों के सपनों से जोड़ लें!

ऐसी 'प्रगतिशील' छात्र संगठन उन कैरियरवादी तत्वों के जमावड़े बनते जा रहे हैं जो कुछ दिन तक छात्र-आन्दोलन का शौक पूरा कर लेने के बाद इस या उस एन.जी.ओ. का द्वार खटखटाने पहुंच जाते हैं। ये छात्र संगठन एक गलत नेतृत्व के पुछल्ले बने हुए सुविधाजनक वाम के ऐसे रास्ते पर कदम बढ़ा रहे हैं जो हमारे लिए चिन्ता और परेशानी का सबब है!

कुल मिलाकर, आज हमें परिवर्तनकामी छात्र राजनीति के भीतर से भी ऐसे आह्वान का अभाव नजर आ रहा है जो युवा मानस पर मारक चोट करे, उसे बेचैन कर दे और उसे अपने मध्यवर्गीय मानस की सीमाओं को तोड़ने के लिए प्रेरित कर सके, जो उसे महज अपने निजी कैरियर के व्यामोह में डूबे रहने या व्यवस्था की चौहद्दी में ही पड़े रहने की मृगमरीचिका से बाहर निकालकर मेहनतकशों के संघर्षों के साथ जुड़ने के लिए ललकार सके।

ऐसे में यह हमारी सदिच्छा हो सकती है कि क्रांतिकारी वामपंथी छात्र संगठन अगर एकजुट हो जायें तो छात्र राजनीति को मौजूदा गतिरोध से बाहर निकाला जा सकता है। कड़वा सच यह है कि इन छात्र संगठनों में से अधिकांश का स्वरूप-संरचना और शिक्षा ऐसी बन चुकी है कि अब इन्हें ही लेकर कुछ जोड़-तोड़कर, कुछ मोर्चे बनाकर, कुछ एकताएं कर देश व्यापी छात्र आन्दोलन को क्रांतिकारी दिशा देने की बात सोच पाना कठिन होता जा रहा है। निस्सन्देह, इन छात्र संगठनों में कुछ क्रांतिकारी तत्व मौजूद हैं और यदि कोई सच्चा क्रांतिकारी ध्रुव विकसित हो तो उसके इर्द गिर्द ये लामबंद हो सकते हैं लेकिन आजकल जिनके झंडे तले वे हैं, वहां रहते हुए यह लामबंदी फिलहाल मुश्किल प्रतीत होती है।

आज जरूरत है एक नयी शुरूआत की, छात्र-युवा आन्दोलन के एक नये कार्यक्रम की, नये एजेण्डे की। आज कैम्पसों में जनतंत्र का जो हाल है, नयी शिक्षा नीति लागू होने के बाद छात्र युवा आबादी की संरचना में जो बदलाव आये हैं उन्हें देखते हुए क्रांतिकारी छात्र-युवा आन्दोलन का पुराना सांचा और खांचा काम नहीं आने वाला । नयी शुरूआत के लिए आज इस सच को हमें स्वीकार कर चलना होगा कि चाहे दिल्ली वि. वि. हो , बी.एच.यू. या इलाहाबाद विश्वविद्यालय, या छात्र राजनीति के गढ़ माने जाने वाले अन्य विश्वविद्यालय हों, छात्र-युवा आबादी विगत दस वर्षों में अपने अधिकारों की लड़ाई किश्तों में ठीक उसी तरह हार चुका है, जिस तरह मजदूर वर्ग फिलहाल शासकों के हमलों के खिलाफ अपनी लडाई हार चुका है। यथार्थ चाहे जितना अप्रीतिकर हो, उसे आँखें दो-चार किये बिना नयी शुरूआतों की जमीन नहीं तलाशी जा सकती।

बढ़ती फीसों और घटती सीटों से आज कैम्पसों में छात्र आबादी भी बहुत कम रह गयी है। जो हैं भी उनमें से भारी संख्या ऐसे छात्रों की है जो खाते-पीते घरों के स्वार्थी-कैरियरवादी, सामाजिक सरोकारों से रहित लाडले हैं। ये छात्र उन परिवारों से आते हैं जिनका इस व्यवस्था में न केवल गुजर-बसर हो जा रहा है , बल्कि अच्छी तरह गुजर-बसर हो रहा है। इसलिए छात्र-युवा आन्दोलन को आज उन छात्रों से जोड़ना होगा जो इन कैम्पसों से ठेल दिये गये है, जो महानगरों की निम्नमध्यवर्गीय रिहायशी इलाकों में, दूर-दराज कस्बाई ग्रामीण क्षेत्रों में हताश-कुण्ठित अपने भविष्य के अन्ध कूप में डूब उतरा रहे हैं। इनमें से बहुतेरे युवाओं को आज फैक्टरियों के गेट के सामने दिहाड़ी मांगने वालों की कतार में देखा जा सकता है। इतना ही नहीं, आज छात्र-युवा आन्दोलन को प्रत्यक्षतः व्यापक मेहनतकश अवाम के पूंजी विरोधी संघर्षों से जुड़ना होगा। उन मेहनतकशों से जिनके ऊपर पूरे देश का मुट्ठीभर परजीवी वर्ग लदा हुआ है और जिनके बोझ तले इनकी जिंदगी पिस रही है।

आज की परिस्थिति में शहीदे-आजम भगतसिंह के इस उद्धरण की विशेष प्रासंगिकता उभर आयी है:

"नौजवानों को क्रान्ति का यह संदेश देश के कोने-कोने में पहुंचाना है, फैक्टरी-कारखानों के क्षेत्रों में, गंदी बस्तियों और गांवों की जर्जर झोंपड़ियों में रहने वाले करोड़ों लोगों में इस क्रान्ति की अलख जगानी है जिससे आजादी आयेगी और तब एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य का शोषण असम्भव हो जायेगा।"

भगत सिंह ने जनता के वास्तविक आजादी को सामाजवादी क्रांति से जोडा था और मेहनतकशों से जुड़ने के लिए युवाओं का आह्वान किया था। उन्होनें बहुत दृढ़ और दो टूक शब्दों में यह आकलन प्रस्तुत किया था कि जब तक सारी सत्ता मेहनतकशों के हाथ में नहीं आयेगी तब तक जनता की आजादी का सपना पूरा नहीं होगा।

...और आज देश को राजनीतिक आजादी मिले आधी सदी से अधिक का समय गुजर चुका है। इस अवधि में औसतन दो पीढ़ियां युवा हो चुकी हैं और तीसरी पीढ़ी यौवन की चौहद्दी में प्रवेश कर चुकी है। पर भगत सिंह का सपना अभी यथार्थ की जमीन में रोपा नहीं जा सका है।

आखिर हम उस आह्वान की कब तक अनसुनी करते रहेगें? सपनों को टालते रहने से वे मुरझा जाते हैं। इसलिए, आज हम नये सिरे से सभी सच्चे, बहादुर, इन्साफपसंद सपने देखने वालों नौजवानों का आह्वान करते है कि एकजुट हो जाओ, संगठित हो जाओ! " क्रांतिकारी तूफ़ानों में उड़ाने भरने के लिए अपने पंखों को तोलो"—भविष्य यह आह्वान कर रहा है। क्या तुम इस आवाज को सुन रहे हो?